आत्म निरीक्षण और परीक्षण

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

विश्व में एक अविनाशी तत्व आत्मा है। आत्मा चेतन तत्व है उसमें हलन–चलन एवं संवेदन की क्रिया होती है। आत्मा हमारा अस्तित्व है। आत्मा के न रहने पर शरीर जड़ हो जाता है। आत्मा ही वह तत्व है जो शरीर को चेतना प्रदान करता है। आत्मा अजर, अमर, अविनाशी, शक्तिसम्पन्न एंव अनन्त सुख का भण्डार है। आत्मा सच्चिदानन्द स्वरूप हैं। अक्षय सुख आत्म निरीक्षण एवं परीक्षण में है। भीतर के सुख को जानना चाहिए। निरीक्षण भीतरी जगत का विषय है। कबीरदासजी ने लिखा है–

हम न मरब मरिहै संसारा,

हमको मिला जियावन हारा।

अर्थात् हम नहीं मरेंगे बल्कि यह संसार मर जायेगा। हमें तो आत्मा का ज्ञान हो गया है। करीबरदासजी की यह उक्ति यह सिद्ध करती है कि जिसको आत्मज्ञान हो गया है वह कभी मृत्यु को प्राप्त नहीं करता। वह इस संसार से मुक्त हो जाता है। आत्मा जानना और मानना ही आत्मज्ञान है। आत्मा सभी प्राणियों में है। कर्मों के प्रभाव के कारण सभी को शरीर प्राप्त होता है और कर्मों का फल भोगकर सभी प्राणी दूसरी योनि में चले जाते हैं। यह शरीर भोगायतन है। आत्मा तो सभी में एकसमान है। कर्मों के नष्ट होने पर आत्मा का प्रकाश स्पष्ट हो जाता है। सभी दर्शनों में आत्मा का चिंतन मुख्य रूप से प्राप्त होता है। आत्मा का कोई रूप नहीं है कोई रंग नहीं है। आत्मा तो पवित्र सच्चिदानंद स्वरूप है। दार्शनिकों ने भिन्न–भिन्न दृष्टिकोण से आत्मा पर चिंतन किया है। पवित्र आत्मा में अहिंसा, सत्य, करूणा, दया की भावना जाग्रत रहती है। इसी से आत्मा की पवित्रता का ज्ञान होता है। करूणा मानवीय संवेदना का एक ऐसा भाव है जिसमें मानव का हृदय विगलित होता चला जाता है। करुणा भाव भी मानव को अभिभूत कर देता है। उसकी उत्प्रेरणा भी बहुत प्रबल होती है।

करुणा भाव किसी राग भाव का अंग नहीं होकर एक स्वतंत्र आत्म भाव है, राग भाव किसी परिचित या चिरपरिचित के साथ ही हो पाता है किन्तु करुणा भाव के लिए कोई शर्त नहीं है। कभी–कभी तो करुणाशील व्यक्ति रोते हुए दुःखी प्राणी के साथ स्वयं रोने लगता है। वह दुःखी के दुःख को अपने आप में अनुभव करता है। यह संवेदना करुणा भाव से ही जग पाती है। करुणा वस्तुतः एक आत्म भाव है। आर्तग्रस्त प्राणी तो निमित्त मात्र होता है। सरल और सौम्य मानसिकता में करुणा भाव का निश्चित अस्तित्व पाया है। परमार्थ की आराधना में करुणा भाव का सर्वाधिक महत्व है, सच पूछा जाए तो करुणा के बिना परमार्थ हो ही नहीं सकता। करुणा का ही पर्यायवाची शब्द अनुकम्पा है। अनुकम्पा को संवेदना का पर्यायवाची कह दें तो अनुपयुक्त नहीं होगा। पीड़ाग्रस्त प्राणी कांपता है, उसके साथ करुणानिधि मानस भी अनुकम्पित होने लगता है। जटायु को तड़पता देख श्री रामचन्द्रजी स्वयं विगलित हो गये। उन्होंने सीता को ढूंढ़ना छोड़ दिया और जटायु की सेवा करने लग गये। उस घायल पक्षी को गोद में उठाकर गले लगाया, प्यार से सहलाया। असीम पीड़ा से वह तड़प रहा था। श्री रामचन्द्रजी भी उसका दुःख देख रोने लगे थे। जटायु के साथ राम का हृदय भी कांप रहा था, यह अनुकम्पा भाव शुद्ध आत्म भाव था। ऐसा भाव किसी भी कोने से राग भाव नहीं हो सकता। राग भाव तो आत्मा का एक विकार भाव है जो त्याज्य है किन्तु करूणा भाव तो किसी की पीड़ा के साथ सहानुभूति में जगने वाला आत्मा का एक दिव्य स्वभाव है, यह कदापि हेय नहीं हो सकता। भगवान महावीर ने अपने प्रतिद्वंद्वी गोशालक को भी तेजोलेश्या की आग से जलते हुए बचा लिया था। यह विशुद्ध करूणा भाव था। करूणा भाव ही वास्तव में वह भूमिका है, जिस पर सम्यकत्व, व्रतीत्व, तीर्थंकरत्व, ईश्वरत्व आदि सभी परमार्थ न केवल पैदा होते हैं, अपितु फलते–फूलते हैं। प्रत्येक मानव असुरक्षित तथा भयग्रस्त है। सभी आस्तिक दर्शन किसी न किसी रूप में आत्मा के अस्तित्त्व में विश्वास करते हैं, क्योंकि आत्मा के अस्तित्त्व को माने बिना कर्म और पुनर्जन्म की व्याख्या ही नहीं की जा सकती। आत्मा ही एक ऐसा शाश्वत तत्त्व है जिसके आधार पर मानव अपने अस्तित्त्व को सिद्ध करता है। मनुष्य जन्म के सिवा और जितनी योनियां हैं, सभी केवल कर्मों का फल भोगने के लिये ही मिलती हैं। मानव जीवन का परम लक्ष्य आत्मामृत की प्राप्ति ही है। वह आत्मा दो प्रकार की है, एक

जीवात्मा दूसरी परमात्मा। परमात्मा या ईश्वर सर्वज्ञ है, और एक है। जीवात्मा प्रत्येक शरीर में भिन्न–भिन्न व्यापक और नित्य है। आत्मा नित्य शुद्ध–बुद्ध मुक्त है। वह सच्चिदानन्द बताया गया है। अपराविद्या वेद, व्याकरण, निरूक्त, छंद, ज्योतिष आदि शास्त्रों का ज्ञान है और परा विद्या केवल अक्षरब्रह्म का ज्ञान है। जीवात्मा वास्तव में न स्त्री है, न पुरुष है और न नपुंसक ही है। यह जब जिस शरीर को ग्रहण करता है, उस समय उससे संयुक्त होकर वैसा ही बन जाता है। जो जीवात्मा आज स्त्री है, वही दूसरे जन्म में पुरुष हो सकता है, जो पुरुष है, वही स्त्री हो सकता है। भाव यह है कि स्त्री, पुरुष और नपुंसक आदि भेद शरीर को लेकर हैं, जीवात्मा को लेकर नहीं। जीवात्मा सर्वभेदशून्य और सारी उपाधियों से रहित है।